4 मैथिलीशरण गुप्त

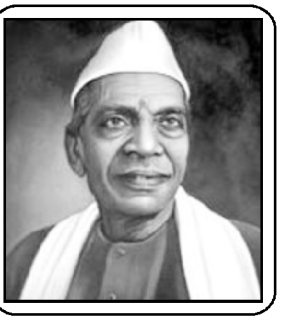

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म चिरगाँव, जिला झाँसी में 3 अगस्त, सन् 1886 ई० में हुआ था। काव्य-रचना की ओर बाल्यावस्था से ही इनका झुकाव था। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से इन्होंने हिन्दी काव्य की नवीन धारा को पुष्ट कर उसमें अपना विशेष स्थान बना लिया था। इनकी कविता में देश-भक्ति एवं राष्ट्र-प्रेम की व्यंजना प्रमुख होने के कारण इन्हें हिन्दी-संसार ने 'राष्ट्रकवि' का सम्मान दिया। राष्ट्रपति ने इन्हें संसद्-सदस्य मनोनीत किया। भारती का यह साधक 12रदिसम्बर, सन् 1964 ई० में गोलोकवासी हो गया।

गुप्तजी की रचना-सम्पदा विशाल है। इनकी विशेष ख्याति रामचरित पर आधारित महाकाव्य **'साकेत'** के कारण है। **'जयद्रथ वध', 'भारत-भारती', 'अनघ', 'पंचवटी', 'यशोधरा', 'द्वापर', 'सिद्धराज'** आदि गुप्तजी की अन्य प्रसिद्ध काव्य-कृतियाँ हैं। **'यशोधरा'** एक चम्पूकाव्य है जिसमें गुप्त जी ने महात्मा बुद्ध के चरित्र का वर्णन किया है।

कवि : एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—3 अगस्त, सन् 1886 ई०।
- **जन्म-स्थान**—चिरगाँव (झाँसी)।
- **पिता**—सेठ रामचरण गुप्त।
- **मुख्य रचनाएँ**—साकेत, भारत-भारती, यशोधरा, द्वापर, पंचवटी, सिद्धराज।
- **शिक्षा :** घर पर ही।
- **भाषा :** खड़ी बोली, सरल, सुसंगठित, प्रसाद तथा ओजगुण से युक्त।
- **शैली :** उपदेशात्मक शैली, प्रबन्धात्मक शैली, नीति शैली, विवरणात्मक शैली।
- **मृत्यु**—12 दिसम्बर, सन् 1964 ई०।

गुप्त जी का पहला काव्य-संग्रह **'भारत-भारती'** है, जिसमें भारत की कुदशा का बयान हुआ है। माइकेल मधुसूदन की वीरांगना, विरहिणी ब्रजांगना, मेघनाद-वध और नवीन चन्द्र के पलाशीर युद्ध का इन्होंने अच्छे पद्यमय अनुवाद किये हैं। देश के कालानुसार बदलती भावनाओं तथा विचारों को भी अपनी रचना में स्थान देने की इनमें क्षमता है। छायावाद के आगमन के साथ गुप्तजी की कविता में भी लाक्षणिक वैचित्र्य और मनोभावों की सूक्ष्मता की मार्मिकता आयी। गुप्तजी का झुकाव भी गीति-काव्य की ओर हुआ। प्रबन्ध के भीतर ही गीति-काव्य का समावेश करके गुप्तजी ने भाव-सौन्दर्य के मार्मिक स्थलों से परिपूर्ण 'यशोधरा' और 'साकेत' जैसे उत्कृष्ट काव्य-कृतियों का सृजन किया। गुप्तजी के काव्य की यह प्रधान विशेषता है कि गीति-काव्य के तत्त्वों को अपनाने के कारण उसमें सरसता आयी है, पर प्रबन्ध की धारा की भी उपेक्षा नहीं हुई। गुप्तजी के कवित्व के विकास के साथ इनकी भाषा का बहुत परिमार्जन हुआ। उसमें धीरे-धीरे लाक्षणिकता, संगीत और लय के तत्त्वों का प्राधान्य हो गया।

राष्ट्र-प्रेम गुप्तजी की कविता का प्रमुख स्वर है। 'भारत-भारती' में प्राचीन भारतीय संस्कृति का प्रेरणाप्रद चित्रण हुआ है। इस रचना में व्यक्त स्वदेश-प्रेम ही इनकी परवर्ती रचनाओं में राष्ट्र-प्रेम और नवीन राष्ट्रीय भावनाओं में परिणत हो गया। इनकी कविता में आज की समस्याओं और विचारों के स्पष्ट दर्शन होते हैं। गाँधीवाद तथा कहीं-कहीं आर्य समाज का प्रभाव भी उन

पर पड़ा है। अपने काव्यों की कथावस्तु गुप्तजी ने आज के जीवन से न लेकर प्राचीन इतिहास अथवा पुराणों से ली है। ये अतीत की गौरव-गाथाओं को वर्तमान जीवन के लिए मानवतावादी एवं नैतिक प्रेरणा देने के उद्देश्य से ही अपनाते हैं।

गुप्तजी की चरित्र कल्पना में कहीं भी अलौकिकता के लिए स्थान नहीं है। इनके सारे चरित्र मानव हैं, उनमें देव और दानव नहीं हैं। इनके राम, कृष्ण, गौतम आदि सभी प्राचीन और चिरकाल से हमारी श्रद्धा प्राप्त किये हुए पात्र हैं, इसीलिए वे जीवन-प्रेरणा और स्फूर्ति प्रदान करते हैं। 'साकेत' के राम 'ईश्वर' होते हुए भी तुलसी की भाँति 'आराध्य' नहीं, हमारे ही बीच के एक व्यक्ति हैं।

नारी के प्रति गुप्तजी का हृदय सहानुभूति और करुणा से आप्लावित है। 'यशोधरा', 'उर्मिला', 'कैकेयी', 'विधृता', 'रानकदे' आदि नारियाँ गुप्तजी की महत्त्वपूर्ण सृष्टि हैं। 'साकेत' में उर्मिला तथा 'यशोधरा' में गौतम-पत्नी यशोधरा को भारतीय नारी-जीवन के आदर्श की प्रतिमाएँ बताते हुए उनकी त्याग-भावना एवं करुणा को बड़े ही सरल एवं सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। इनकी निम्न दो पंक्तियाँ हिन्दी काव्य की अमर निधि हैं—

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।

गुप्तजी की भाव-व्यंजना में सर्वत्र ही जीवन की गम्भीर अनुभूति के दर्शन होते हैं। इन्होंने कल्पना का आश्रय तो लिया है, पर इनके भाव कहीं भी मानव की स्वाभाविकता का अतिक्रमण नहीं करते। इनके काव्य में सीधी और सरल भाषा में इतनी सुन्दर भाव-व्यंजना हो जाने का एकमात्र कारण जीवन की गम्भीर अनुभूति ही है। गुप्तजी खड़ीबोली को हिन्दी कविता के क्षेत्र में प्रतिष्ठित करनेवाले समर्थ कवि के रूप में विशेष महत्त्व रखते हैं। सरल, शुद्ध, परिष्कृत खड़ीबोली में कविता करके इन्होंने ब्रजभाषा के स्थान पर उसे समर्थ काव्य-भाषा सिद्ध कर दिखाया। स्थान-स्थान पर लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोगों से इनकी काव्य-भाषा और भी जीवन्त हो उठी है। प्राचीन एवं नवीन सभी प्रकार के अलंकारों का गुप्तजी के काव्य में भाव-सौन्दर्यवर्धक स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। सभी प्रकार के प्रचलित छन्दों में इन्होंने काव्य-रचना की है।

गुप्तजी युगीन चेतना और इसके विकसित होते हुए रूप के प्रति सजग थे। इसकी स्पष्ट झलक इनके काव्य में मिलती है। राष्ट्र की आत्मा को वाणी देने के कारण ये राष्ट्र-कवि कहलाये और आधुनिक हिन्दी काव्य की धारा के साथ विकास-पथ पर चलते हुए युग-प्रतिनिधि कवि स्वीकार किये गये। इन्होंने राष्ट्र को जगाया और उसकी चेतना को वाणी दी। हिन्दी काव्य को शृंगार रस की दलदल से निकालकर उसमें राष्ट्रीय भावों की पुनीत गंगा बहाने का श्रेय गुप्त जी को ही है। ये सच्चे अर्थों में आधुनिक भारत के राष्ट्रकवि थे।

कैकेयी का अनुताप

[प्रस्तुत काव्य-पंक्तियाँ राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित 'साकेत' महाकाव्य से अवतरित की गयी हैं। वीर क्षत्राणी कैकेयी अपने किये पर पश्चात्ताप करके गोमुखी गंगा के समान पवित्र हो गयी है। कैकेयी भरत के साथ राम को लौटाने के लिए वन में गयी है। वह अनेक प्रकार से श्रीराम को वन से अयोध्या वापस ले चलने का प्रयास करती है।]

तदनन्तर बैठी सभा उटज के आगे,
नीले वितान के तले दीप बहु जागे।
टकटकी लगाये नयन सुरों के थे वे,
परिणामोत्सुक उन भयातुरों के थे वे।
उत्फुल्ल करौंदी-कुंज वायु रह रहकर,
करती थी सबको पुलक-पूर्ण मह महकर।
वह चन्द्रलोक था, कहाँ चाँदनी वैसी,
प्रभु बोले गिरा गभीर नीरनिधि जैसी।

"हे भरतभद्र, अब कहो अभीप्सित अपना",
सब सजग हो गये, भंग हुआ ज्यों सपना।
"हे आर्य, रहा क्या भरत-अभीप्सित अब भी?
मिल गया अकण्टक राज्य उसे जब, तब भी?
पाया तुमने तरु-तले अरण्य-बसेरा,
रह गया अभीप्सित शेष तदपि क्या मेरा?
तन तड़प तड़पकर तप्त तात ने त्यागा,
क्या रहा अभीप्सित और तथापि अभागा?
हा! इसी अयश के हेतु जनन था मेरा,
निज जननी ही के हाथ हनन था मेरा।
अब कौन अभीप्सित और आर्य, वह किसका?
संसार नष्ट है भ्रष्ट हुआ घर जिसका।
मुझसे मैंने ही आज स्वयं मुँह फेरा,
हे आर्य, बता दो तुम्हीं अभीप्सित मेरा?"
प्रभु ने भाई को पकड़ हृदय पर खींचा,
रोदन जल से सविनोद उन्हें फिर सींचा!
"उसके आशय की थाह मिलेगी किसको?
जनकर जननी ही जान न पाई जिसको?"

"यह सच है तो अब लौट चलो तुम घर को।"
चौंके सब सुनकर अटल केकयी-स्वर को।
सबने रानी की ओर अचानक देखा,
वैधव्य-तुषारावृता यथा विधु-लेखा।
बैठी थी अचल तथापि असंख्यतरंगा,
वह सिंही अब थी हहा! गोमुखी गंगा-
"हाँ, जनकर भी मैंने न भरत को जाना,
सब सुन लें, तुमने स्वयं अभी यह माना।
यह सच है तो फिर लौट चलो घर भैया,

अपराधिन मैं हूँ तात, तुम्हारी मैया।
दुर्बलता का ही चिह्न विशेष शपथ है,
पर, अबलाजन के लिए कौन-सा पथ है?
यदि मैं उकसाई गई भरत से होऊँ,
तो पति समान ही स्वयं पुत्र भी खोऊँ।
ठहरो, मत रोको मुझे, कहूँ सो सुन लो।
पाओ यदि उसमें सार उसे सब चुन लो।
करके पहाड़-सा पाप मौन रह जाऊँ?
राई भर भी अनुताप न करने पाऊँ?''
थी सनक्षत्र शशि-निशा ओस टपकाती,
रोती थी नीरव सभा हृदय थपकाती।
उल्का-सी रानी दिशा दीप्त करती थी,
सबमें भय-विस्मय और खेद भरती थी।
''क्या कर सकती थी, मरी मन्थरा दासी,
मेरा ही मन रह सका न निज विश्वासी।
जल पंजर-गत अब अरे अधीर, अभागे,
वे ज्वलित भाव थे स्वयं तुझीमें जागे।
पर था केवल क्या ज्वलित भाव ही मन में?
क्या शेष बचा था कुछ न और इस मन में?
कुछ मूल्य नहीं वात्सल्य-मात्र, क्या तेरा?
पर आज अन्य-सा हुआ वत्स भी मेरा।
थूके, मुझ पर त्रैलोक्य भले ही थूके,
जो कोई जो कह सके, कहे, क्यों चूके?
छीने न मातृपद किन्तु भरत का मुझसे,
रे राम, दुहाई करूँ और क्या तुझसे?
कहते आते थे यही अभी नरदेही,
'माता न कुमाता, पुत्र कुपुत्र भले ही।'
अब कहें सभी यह हाय! विरुद्ध विधाता,
'है पुत्र पुत्र ही, रहे कुमाता माता।'
बस मैंने इसका बाह्य-मात्र ही देखा,
दृढ़ हृदय न देखा, मृदुल गात्र ही देखा,
परमार्थ न देखा, पूर्ण स्वार्थ ही साधा,
इस कारण ही तो हाय आज यह बाधा!
युग युग तक चलती रहे कठोर कहानी-
'रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी।'
निज जन्म जन्म में सुने जीव यह मेरा-
'धिक्कार! उसे था महा स्वार्थ ने घेरा।'—''
'सौ बार धन्य वह एक लाल की माई,
जिस जननी ने है जना भरत-सा भाई।'

पागल-सी प्रभु के साथ सभा चिल्लाई-
'सौ बार धन्य वह एक लाल की माई।''

'हा! लाल? उसे भी आज गमाया मैंने,
विकराल कुयश ही यहाँ कमाया मैंने।
निज स्वर्ग उसी पर वार दिया था मैंने,
हर तुम तक से अधिकार लिया था मैंने।
पर वही आज यह दीन हुआ रोता है,
शंकित सबसे धृत हरिण-तुल्य होता है,
श्रीखण्ड आज अंगार-चण्ड है मेरा,
तो इससे बढ़कर कौन दण्ड है मेरा?

पटके मैंने पद-पाणि मोह के नद में,
जन क्या क्या करते नहीं स्वप्न में, मद में?
हा! दण्ड कौन, क्या उसे डरूँगी अब भी?
मेरा विचार कुछ दयापूर्ण हो तब भी।
हा दया! हन्त वह घृणा! अहह वह करुणा!
वैतरणी सी हैं आज जाह्नवी-वरुणा!
सह सकती हूँ चिर नरक, सुनें सुविचारी,
पर मुझे स्वर्ग की दया दण्ड से भारी।
लेकर अपना यह कुलिश-कठोर कलेजा,
मैंने इसके ही लिए तुम्हें वन भेजा।
घर चलो इसीके लिए, न रूठो अब यों,
कुछ और कहूँ तो उसे सुनेंगे सब क्यों?
मुझको यह प्यारा और इसे तुम प्यारे,
मेरे दुगुने प्रिय रहो न मुझसे न्यारे।
मैं इसे न जानूँ, किन्तु जानते हो तुम
अपने से पहले इसे मानते हो तुम।
तुम भ्राताओं का प्रेम परस्पर जैसा,
यदि वह सब पर यों प्रकट हुआ है वैसा,
तो पाप-दोष भी पुण्य-तोष है मेरा,
मैं रहूँ पंकिला, पद्म-कोष है मेरा।
आगत ज्ञानीजन उच्च भाल ले लेकर,
समझावें तुमको अतुल युक्तियाँ देकर।
मेरे तो एक अधीर हृदय है बेटा,
उसने फिर तुमको आज भुजा भर भेटा।

('साकेत' से)

गीत

['साकेत' से अवतरित निम्न काव्य-पंक्तियों में कवि ने वन को गये लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला की विरह-व्यथा का मार्मिक चित्रण किया है। अनेक ऋतुओं में विरहिणी उर्मिला का विरह असह्य हो जाता है।]

निरख सखी, ये खंजन आये,
फेरे उन मेरे रंजन ने नयन इधर मन भाये!
फैला उनके तन का आतप, मन से सर सरसाये,

घूमें वे इस ओर वहाँ, ये हंस यहाँ उड़ छाये!
करके ध्यान आज इस जन का निश्चय वे मुसकाये,
फूल उठे हैं कमल, अधर-से यह बन्धूक सुहाये!
स्वागत, स्वागत, शरद, भाग्य से मैंने दर्शन पाये,
नभ ने मोती वारे, लो, ये अश्रु अर्घ्य भर लाये।।1।।

शिशिर, न फिर गिरि-वन में,
जितना माँगे, पतझड़ दूँगी मैं इस निज नन्दन में,
कितना कम्पन तुझे चाहिए, ले मेरे इस तन में।
सखी कह रही, पाण्डुरता का क्या अभाव आनन में?
वीर, जमा दे नयन-नीर यदि तू मानस-भाजन में,
तो मोती-सा मैं अकिंचना रक्खूँ उसको मन में।
हँसी गई, रो भी न सकूँ मैं,-अपने इस जीवन में,
तो उत्कण्ठा है, देखूँ फिर क्या हो भाव-भुवन में।।2।।

मुझे फूल मत मारो,
मैं अबला बाला वियोगिनी, कुछ तो दया विचारो।
होकर मधु के मीत मदन, पटु, तुम कटु, गरल न गारो,
मुझे विकलता, तुम्हें विफलता, ठहरो, श्रम परिहारो।
नहीं भोगिनी यह मैं कोई, जो तुम जाल पसारो,
बल हो तो सिन्दूर-बिन्दु यह-यह हरनेत्र निहारो!
रूप-दर्प कन्दर्प, तुम्हें तो मेरे पति पर वारो,
लो, यह मेरी चरण-धूलि उस रति के सिर पर धारो।।3।।

यही आता है इस मन में,
छोड़ धाम-धन जाकर मैं भी रहूँ उसी वन में।

प्रिय के व्रत में विघ्न न डालूँ, रहूँ निकट भी दूर,
व्यथा रहे, पर साथ-साथ ही समाधान भरपूर।
हर्ष डूबा हो रोदन में,
यही आता है इस मन में।

बीच बीच में उन्हें देख लूँ मैं झुरमुट की ओट,
जब वे निकल जायँ तब लेटूँ उसी धूल में लोट।
रहें रत वे निज साधन में,
यही आता है इस मन में।

जाती जाती, गाती गाती, कह जाऊँ यह बात-
धन के पीछे जन, जगती में उचित नहीं उत्पात।
प्रेम की ही जय जीवन में।
यही आता है इस मन में।।4।।

('साकेत' से)

अभ्यास प्रश्न

पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. पद्यांशों पर आधारित निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

(कैकेयी का अनुताप)

(क) "हे भरतभद्र, अब कहो अभीप्सित अपना",
सब सजग हो गये, भंग हुआ ज्यों सपना।
"हे आर्य, रहा क्या भरत-अभीप्सित अब भी?
मिल गया अकण्टक राज्य उसे जब, तब भी?
पाया तुमने तरु-तले अरण्य-बसेरा,
रह गया अभीप्सित शेष तदपि क्या मेरा?
तन तड़प तड़पकर तप्त तात ने त्यागा,
क्या रहा अभीप्सित और तथापि अभागा?
हा! इसी अयश के हेतु जनन था मेरा,
निज जननी ही के हाथ हनन था मेरा।
अब कौन अभीप्सित और आर्य, वह किसका?
संसार नष्ट है भ्रष्ट हुआ घर जिसका।
मुझसे मैंने ही आज स्वयं मुँह फेरा,
हे आर्य, बता दो तुम्हीं अभीप्सित मेरा?"
प्रभु ने भाई को पकड़ हृदय पर खींचा,
रोदन जल से सविनोद उन्हें फिर सींचा!
"उसके आशय की थाह मिलेगी किसको?
जनकर जननी ही जान न पाई जिसको?"

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) रामचन्द्र जी ने भरत से पूछा कि तुम्हारी क्या इच्छा है? तो उन्होंने क्या कहा?
(iii) इस पद्यांश में कौन-सा अलंकार है?
(iv) 'हे भरतभद्र, अब कहो अभीप्सित अपना' यह कथन किसका है?
(v) रेखांकित पंक्ति की व्याख्या कीजिए।

(ख) दुर्बलता का ही चिह्न विशेष शपथ है,
पर, अबलाजन के लिए कौन-सा पथ है?
यदि मैं उकसाई गई भरत से होऊँ,
तो पति समान ही स्वयं पुत्र भी खोऊँ।
ठहरो, मत रोको मुझे, कहूँ सो सुन लो।
पाओ यदि उसमें सार उसे सब चुन लो।

करके पहाड़-सा पाप मौन रह जाऊँ?
राई भर भी अनुताप न करने पाऊँ?''
थी सनक्षत्र शशि-निशा ओस टपकाती,
रोती थी नीरव सभा हृदय थपकाती।
उल्का-सी रानी दिशा दीप्त करती थी,
सबमें भय-विस्मय और खेद भरती थी।
''क्या कर सकती थी, मरी मन्थरा दासी,
मेरा ही मन रह सका न निज विश्वासी।

प्रश्न– (i) दिये गये पद्यांश के कवि एवं कविता का नाम लिखिए।
(ii) ''दुर्बलता का ही चिह्न विशेष शपथ है।'' इस पंक्ति का भाव स्पष्ट कीजिए।
(iii) इस पद्यांश में किस भाव को व्यक्त किया गया है?
(iv) 'उल्का-सी रानी दिशा दीप्त करती थी' इस पंक्ति में कौन-सा अलंकार है?
(v) रेखांकित पंक्ति की व्याख्या कीजिए।

(ग) कहते आते थे यही अभी नरदेही,
'माता न कुमाता, पुत्र कुपुत्र भले ही।'
अब कहें सभी यह हाय! विरुद्ध विधाता,
'है पुत्र पुत्र ही, रहे कुमाता माता।'
बस मैंने इसका बाह्य-मात्र ही देखा,
दृढ़ हृदय न देखा, मृदुल गात्र ही देखा,
परमार्थ न देखा, पूर्ण स्वार्थ ही साधा,
इस कारण ही तो हाय आज यह बाधा!
युग युग तक चलती रहे कठोर कहानी-
'रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी।'
निज जन्म जन्म में सुने जीव यह मेरा-
'धिक्कार! उसे था महा स्वार्थ ने घेरा।'—''

अथवा बस मैंने इसका ....महास्वार्थ ने घेरा। **[2020 ZK, ZM]**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) कैकेयी को अभागिन रानी क्यों कहा गया है?
(iii) इस पद्यांश में कवि ने किस प्रसंग का उल्लेख किया है?
(iv) इस पद्यांश में कौन-सा अलंकार है?
(v) रेखांकित पंक्ति की व्याख्या कीजिए।
(vi) प्रस्तुत पद्यांश में किन-किन पात्रों के बीच संवाद हो रहा है?
(vii) दृढ़ हृदय और मृदुल गात शब्द से किसकी ओर संकेत है?
(viii) किस पात्र को महास्वार्थ ने घेर लिया है?
(ix) युग-युग तक कौन-सी कठोर कहानी चलती रहेगी?
(x) रानी कैकेयी को जन्म-जन्मान्तर तक क्या सुनना पड़ेगा?
(xi) नरदेही तथा गात्र शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(घ) मुझको यह प्यारा और इसे तुम प्यारे,
मेरे दुगुने प्रिय रहो न मुझसे न्यारे।
मैं इसे न जानूँ, किन्तु जानते हो तुम,
अपने से पहले इसे मानते हो तुम।
तुम भ्राताओं का प्रेम परस्पर जैसा,
यदि वह सब पर यों प्रकट हुआ है वैसा।
तो पाप-दोष भी पुण्य-तोष है मेरा,
मैं रहूँ पंकिला पद्म-कोष है मेरा।।

प्रश्न– (i) प्रस्तुत पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) कैकेयी को कौन दुगुने प्रिय हैं?
(iv) श्रीराम का कौन प्यारा है?
(v) प्रस्तुत पंक्तियों में कौन-सा रस है?

(ङ) बैठी थी अचल तथापि असंख्यतरंगा,
वह सिंही अब थी हहा! गोमुखी गंगा-
"हाँ, जनकर भी मैंने न भरत को जाना,
सब सुन लें, तुमने स्वयं अभी यह माना।
यह सच है तो फिर लौट चलो घर भैया,
अपराधिन मैं हूँ तात, तुम्हारी मैया।
दुर्बलता का ही चिह्न विशेष शपथ है,
पर, अबलाजन के लिए कौन-सा पथ है? **[2019 CW]**

प्रश्न– (i) प्रस्तुत पद्यांश में किन-किन पात्रों के बीच संवाद हो रहा है?
(ii) पाठ का शीर्षक एवं रचयिता के नाम का उल्लेख कीजिए।
(iii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iv) घर लौट चलने के लिए कौन किससे आग्रह कर रहा है?
(v) सिंहनी और गोमुखी गंगा से क्या अभिप्राय है?

(च) जल पंजर-गत अब अरे अधीर, अभागे,
वे ज्वलित भाव थे स्वयं तुझीमें जागे।
पर था केवल क्या ज्वलित भाव ही मन में?
क्या शेष बचा था कुछ न और इस मन में?
कुछ मूल्य नहीं वात्सल्य-मात्र, क्या तेरा?
पर आज अन्य-सा हुआ वत्स भी मेरा।
थूके, मुझ पर त्रैलोक्य भले ही थूके,
जो कोई जो कह सके, कहे, क्यों चूके?
छीने न मातृपद किन्तु भरत का मुझसे,
रे राम, दुहाई करूँ और क्या तुझसे? **[2019 CL]**

प्रश्न– (i) इस पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) 'अन्य-सा हुआ वत्स भी मेरा' का आशय स्पष्ट कीजिए।
(iv) इस पद्यांश में अभिव्यक्त रस का नाम लिखिए।
(v) 'थूके, मुझ पर त्रैलोक्य भले ही थूके' का भाव स्पष्ट कीजिए।

(गीत)

(छ) मुझे फूल मत मारो,
मैं अबला बाला वियोगिनी, कुछ तो दया विचारो।
होकर मधु के मीत मदन, पटु, तुम कटु, गरल न गारो,
मुझे विकलता, तुम्हें विफलता, ठहरो, श्रम परिहारो।
नहीं भोगिनी यह मैं कोई, जो तुम जाल पसारो,
बल हो तो सिन्दूर-बिन्दु यह-यह हरनेत्र निहारो!
रूप-दर्प कन्दर्प, तुम्हें तो मेरे पति पर वारो,
लो, यह मेरी चरण-धूलि उस रति के सिर पर धारो।। **[2020 ZA, ZC, ZI]**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश के शीर्षक एवं रचयिता का नाम लिखिए।
(ii) उर्मिला ने शिव का तीसरा नेत्र किसे बताया है?
(iii) यह पद्यांश किस ग्रन्थ से उद्धृत है?
(iv) इस पद्यांश में किस ऋतु का वर्णन है?
(v) रेखांकित पंक्ति की व्याख्या कीजिए।
(vi) मुझे फूल मत मारो में फूल का क्या तात्पर्य है?
(vii) मदन को 'मधु का गीत' क्यों कहा गया?
(viii) 'सिन्दूर-बिन्दु' से उर्मिला क्या व्यक्त करना चाहती है?
(ix) कवि ने 'अबला बाला वियोगिनी' को किसके लिए प्रयोग किया है?
(x) 'सिन्दूर-बिन्दु' की तुलना किससे की गयी है?
(xi) चरण धूलि में कौन-सा समास है?

(ज) यही आता है इस मन में,
छोड़ धाम-धन जाकर मैं भी रहूँ उसी वन में।
प्रिय के व्रत में विघ्न न डालूँ, रहूँ निकट भी दूर,
व्यथा रहे, पर साथ-साथ ही समाधान भरपूर।
हर्ष डूबा हो रोदन में,
यही आता है इस मन में। **[2019 CO]**

प्रश्न– (i) पाठ का शीर्षक और कवि का नाम लिखिए।
(ii) मन में क्या भाव उत्पन्न हो रहा है?
(iii) 'रहूँ निकट भी दूर' से क्या अभिप्राय है?
(iv) उपर्युक्त कविता में कौन-सा अलंकार है?
(v) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(झ) निरख सखी, ये खंजन आये,
फेरे उन मेरे रंजन ने नयन इधर मन भाये।
फैला उनके तन का आतप, मन से सर सरसाये,
घूमें वे इस ओर वहाँ, ये हंस यहाँ उड़ छाये।
करके ध्यान आज इस जन का निश्चय वे मुसकाये,
फूल उठे हैं कमल, अधर से यह बन्धूक सुहाये।
स्वागत, स्वागत, शरद भाग्य से मैंने दर्शन पाये,
नभ ने मोती वारे, लो, ये अश्रु अर्घ्य भर लाये। **[2019 CM, CP,CU, 20 ZL]**

प्रश्न– (i) प्रस्तुत पद्यांश किस शीर्षक कविता से लिया गया है, इसके रचयिता कौन हैं?
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) 'हंस के उड़कर आने में' वियोगिनी क्या आभास कर रही है?
(iv) 'फेरे उन मेरे रंजन ने' रंजन किसका संबोधन है?
(v) पूरे पद्यांश में कौन किसके लिए कह रहा है?
(vi) सखी को खंजन दिखाने का तात्पर्य क्या है?
(vii) हंसों को उड़कर यहाँ आने का क्या कारण है?
(viii) प्रिय के मुसकराने को किस रूप में देखा गया है?
(ix) इस काव्यांश में किस ऋतु का वर्णन है?
(x) बन्धूक को अधर के समान क्यों कहा गया है?
(xi) उर्मिला को शरद के विविध रूपों में किसकी छवि दिखाई देती है?
(xii) खंजन की उपमा किससे की गयी है?
(xiii) उर्मिला आदर्श रूप में प्रदान करने के लिए क्या लायी है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए—
(क) वह सिंही अब थी हहा! गोमुखी गंगा।
(ख) माता न कुमाता पुत्र कुपुत्र भले ही।
(ग) सौ बार धन्य वह एक लाल की माई।
(घ) धन के पीछे जन, जगती में उचित नहीं उत्पात।
(ङ) उसके आशय की थाह मिलेगी किसको?
जनकर जननी ही जान न पाई जिसको।
(च) 'दुर्बलता का ही चिह्न विशेष शपथ है।'
(छ) व्यथा रहे, पर साथ-साथ ही समाधान भरपूर।

2. मैथिलीशरण गुप्त की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए। **[2017 MB, MG]**

3. मैथिलीशरण गुप्त का जीवन-परिचय दीजिए तथा उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।

4. मैथिलीशरण गुप्त का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

अथवा मैथिलीशरण गुप्त का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।

[2016 SD, 18AA, 19 CQ, CR, 20 ZB, ZF, ZH, ZK, ZN]

अथवा मैथिलीशरण गुप्त का साहित्यिक-परिचय तथा उनकी महत्त्वपूर्ण रचनाओं का उल्लेख कीजिए।

5. ''गुप्तजी राष्ट्रकवि हैं।'' इस कथन की तर्क सहित पुष्टि कीजिए।
6. 'कैकेयी का अनुताप' के आधार पर कैकेयी की चारित्रिक विशेषताएँ बताइए।
7. मैथिलीशरण गुप्त का जीवन-परिचय निम्नांकित बिन्दुओं के आधार पर लिखिए—
   (i) जन्म-स्थान, काल-समय, जन्मदाता, शिक्षा-दीक्षा।
   (ii) कवि के समय की साहित्यिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ।
8. गुप्तजी ने कैकेयी के चरित्र में जो नवीनताएँ उत्पन्न की हैं, समुचित उद्धरण देते हुए उन्हें स्पष्ट कीजिए।

अथवा मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' में कैकेयी के चरित्र को सुधारने की चेष्टा की है।

9. 'कैकेयी का अनुताप' की विशेषताओं का सोदाहरण उत्तर दीजिए।
10. राम के वन-गमन पर कैकेयी ने जो वर माँगा, उसकी मनोवैज्ञानिक व्याख्या कीजिए।
11. संकलित अंश के आधार पर भरत का चरित्र-चित्रण कीजिए।
12. कैकेयी की आत्मग्लानि एवं अनुताप को मैथिलीशरण गुप्त ने किस प्रकार अभिव्यक्ति प्रदान की है?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मैथिलीशरण गुप्त के 'साकेत' में उद्धृत रामकथा के मौलिक स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।
2. 'शिशिर न फिर गिरि-वन में'—गीत की काव्य-शोभा की विवेचना कीजिए।
3. वियोगिनी उर्मिला शरीर पर शिशिर का आरोप किस तरह करती है?
4. मैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं का नामोल्लेख कीजिए।
5. साकेत की उर्मिला के विरह-वर्णन का चित्रण कीजिए।
6. ''मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में भारतीयता का पूर्णरूपेण दर्शन होता है।'' इस कथन की पुष्टि कीजिए।

काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-पंक्तियों में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—
   (क) हा दया! हन्त वह घृणा! अहह वह करुणा!
   वैतरणी सी हैं आज जाह्नवी वरुणा!
   (ख) तो मोती-सा मैं अकिंचना रक्खूँ उसको मन में।
2. उपमा एवं अनुप्रास अलंकार का लक्षण बताते हुए प्रस्तुत पाठ से एक-एक उदाहरण दीजिए।
3. प्रस्तुत पाठ से शृंगार रस का एक उदाहरण लिखिए।